© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 2 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

# अभिज्ञान शाकुन्तलम में पर्यावरणीय चिन्तन

सुष्मिता सोनकर
(शोधच्छात्रा)
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान
(मा0वि0वि0) गगांनाथ झा परिसर
आजाद पार्क, इलाहाबाद

महाकवि कालिदास कृत "अभिज्ञानशाकुन्तलम्" संस्कृत साहित्य की ही नही वरन् विश्व साहित्य की अमूल्य निधि है, जिसमें कवि ने अपनी प्रतिभा को विकसित किया है। अभिज्ञान में प्रकृति का उपयोग पृष्ठ भूमि के रूप में नही, अपितु नाटक के अनिवार्य अंक के रूप में किया गया है। महाकवि ने व्यवहारिक धरातल पर उतर कर जिन मानव मूल्यों को प्रस्तुत किया है, वे अत्यन्त ही प्रशांसनीय हैं। महाकवि प्रकृति के सूक्ष्म दृष्टा हैं। उनके नाटकों में प्रकृति सौन्दर्य का वर्णन अपने आप मे अद्वितीय है। सम्भवतः संसार में कोई ऐसा विरला व्यक्ति होगा जिसने सजीव प्रकृति का इतना पूर्ण एवं सूक्ष्म अध्ययन किया हो। नाटक के प्रारम्भ में महाकवि ने प्रकृति के जो घनिष्ठ प्रेम प्रस्तुत किया है। वह पर्यावरण संरक्षण की कल्पना को मूर्त रूप प्रदान करता है। नान्दी में अपने इष्ट देव भगवान शिव की दिव्य अष्टमूर्तियों का साक्षात्कार प्रकृति के भीतर करते हुए कवि ने जनमंगल की कामना की है। उन्होने भगवान शिव के प्रकृतिमय रूपों की ही वंदना की है।

या सृष्टिः स्त्रष्टुराद्या वहति विधिहुतं ———————— वस्ताभिरस्टाभिरीशः।[1]

कवि ने छन्द में वर्णित जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु एवं आकाश आदि से मानवी एवं प्राकृतिक पर्यावरण के सम्बन्धों का विवेचन करने के लिए पर्याप्त सामग्री प्रस्तुत करते हुए उन्होने जल तत्व को ब्रह्मा की प्रथम सृष्टि कहा है। यह भी स्पष्ट किया है कि "जल ही जीवन है" हमारे आदि वेद ऋग्वेद में भी जल तत्व को आदि सृष्टि का बीज बतलाते हुए नासदीय सूक्त में कहा गया है–

"अग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमिदम्।"[2]

महाकवि के प्राकृतिक वर्णन की विशेषता है, "प्रकृति में चेतना एवं मानवीय वृत्तियों का आरोप"। कवि ने अपनी नूतन कल्पना एवं प्रतिभा का प्रयोग कर प्रकृति का जड़ता समाप्त कर उसमें भाव प्रवणता, गतिशीलता तथा चेतनता का संचार किया है। प्रकृति के प्रति मनुष्य का प्रेम चित्रित करते–करते महाकवि ने मनुष्य के प्रति प्रकृति का प्रेम–चित्रण किया है। कवि के प्रकृति के भीतर सहानुभूति एवं सुख–दुख की स्थिति में उत्पन्न संवेदना का अनुभव दिखाई पड़ता है। उनी प्रकृति भावनाशील है, मानव जगत के प्रति उसके ह्रदय में पूर्ण सहानुभूति है। चतुर्थ अंक में प्रकृति का मानवी करण बड़े ही सहज ढंग से हुआ है। तपोवन के वृक्ष, लता, पशुपक्षी अपनी संवेदना व्यक्त करते दिखाई पड़ते हैं।

क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डु तरूणा ———————— किसलयोदभेद प्रतिदून्दिूभिः।।[3]

अर्थात् विदाई के अवसर पर वे स्नेही प्रियजन सदृश वृक्ष द्वारा चन्द्रवत, श्वेत वर्ण का, मंगल कार्य में धारण करने योग्य रेशमी वस्त्रों का किसी वृक्ष के द्वारा चरणों में लगाने योग्य महावर (लाक्षारसः) तथा वृक्षाधिष्ठित देवताओं ने अपने कर–पल्लवों से आभूषण प्रदान करते हैं।

विदाई के करूणापूर्ण क्षणों में तपोवन की व्याकुलता का एक चित्र दिखाई पड़ रही है।

उदगलित दर्भकवला मृग्यः परिव्यक्तनर्तना मयूराः।
अपसृतपाण्डुपत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लताः।।[4]

पुत्रवत् पालित मृगशावक विदाई के अवसर पर शकुन्तला के वस्त्र से उलझ जाता है। शकुन्तला जानना चाहती है –

"को नु खल्वेष निवसने में सज्जते" तात कण्व कहते हैं–

शकुन्तला की विदाई के अवसर पर महर्षि कण्व तपोवन के वृक्ष लताओं को सम्बोधित करते हुए कहते है–

पतुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं ..... सर्वैरनुज्ञायताम्।।[5]

इन पक्तियों में प्रकृति पुत्री शकुन्तला का प्रकृति के प्रेम और स्नेह पर्यावरण संरक्षण की भावना भी निहित है। अचेतन प्रकृति के प्रति चेतन मानव की आत्मीयता का इससे बढ़कर क्या उदाहरण हो सकता है? पिता कण्व शकुन्तला एवं माधवीलता (नवमालिका) को एक समान समझते है दोनो ही उनकी पुत्रियॉ है–

संकल्पितं प्रथममेव मयातवाथे, भर्तारमात्म सदृशं सुकृतैर्गता त्वम्।
चूतेन संश्रित वती नवमालिकेय, मस्यामहंत्वयि च सम्प्रति वीतचिन्तः।।[6]

शकुन्तला प्रकृति पुत्री है। उसके सम्वर्धन में प्रकृति का महान योगदान है। शकुन्तला को प्रकृति से अलग करके नही देखा जा सकता है। उत्पन्न होते ही मॉ मेनका एवं पिता द्वारा उसका त्याग, उसका पालन पालन कण्व आश्रम में उसका पोषण सहज ही उसके ह्रदय में प्रकृति से सम्बन्धित विषयों के प्रति आतिशय प्रेमोत्पादक कारण बन जाते हैं। प्रथम अंक में लतापादप को सींचने के अवसर पर शकुन्तला के स्वाभावित पर्यावरण प्रेम को देंखें– "अस्ति में सोदर स्नेहोऽप्येतेषु।"[7]

नवमालिका के प्रति उसके मन मे सगी बहन का प्रेम है वह वृक्ष सींचने के अवसर पर अनुसूया के कहने पर – नवमालिका एनां विस्मृतासि? शकुन्तला तुरन्त कहती है "तत् आत्मानमपि विस्मरिष्यामि"। चतुर्थ अंक में प्रोषित–पतिका शकुन्तला कहती है– तातः लताभगिनी वन जयोत्स्नां तावदामंत्रयिष्ये"। पुनः गले लगती है। आश्रम के मृग के प्रति उसके स्नेह का एक दृष्य बड़ा ही मोहक एवं ह्रदयावर्जक है–

तात एषोटज पर्यन्तचारिणी गर्भ मंथरा मृग वधूर्य दाहनध प्रसवा
भवति तदामह्मं कमति प्रियनिवेदयितृकं विसर्जयिष्यथः।[8]

जन्म के समय ही मृगी के मृत्यु से अनाथ मृगशावक को शकुन्तला श्यामक मुष्टि से पोषण करती है। कुश के अग्रभाग से विधे हुए धाव को भरने के लिए इगुंदी का तेल लगाती है। आभूषण के प्रिय होने पर भी लता भगिनी के प्रति प्रेम होने के कारण वह पत्ते तक को आभूषण के रूप में ग्रहण नही करती इतना ही नही पौधों को बिना सीचें वह स्वयं जल पीने की इच्छा भी नही करती है और प्रथम कुसुम प्रसूति के अवसर पर उत्सव आयोजित करती है। ये पक्तियॉ वर्यावरण संरक्षण के प्रति हमारे प्राचीन काव्य परम्परा की अमूल्य धरोहर है।

प्रकृति का एक–एक अंग शकुन्तला है। प्रकृति को शकुन्तला में से अलग निकाल दिया जाय तो शकुन्तला निर्जीव प्राणी है। वह तपोवन की लता है तभी तो नायक दुष्यन्त ने शकुन्तला के यौवन मण्डित सौन्दर्य को देखकर कहता है –

अधरः किसलय रागः कोमल विटपानु कारिणौ बाहू।
कुसुममिव लोभनीयं यौवनमङगेषु सन्नद्धम्।।[9]

अर्थात यहॉ किसलय राग, कोमल शाखा कुसुम रूप प्राकुतिक उपमानों से कवि ने कण्व आश्रम के प्राकृतिक पर्यावरण उपमानों से कवि ने कण्व आश्रम के प्राकृतिक पर्यावरण का बोध कराया है। शकुन्तला के सहज रूप लावण्य का वर्णन करते हुए कवि ने शैवाल से आवृत्त कमल और कलंक से मण्डित चन्द्रमा से सहायता लेते हुए जलाशय में शोभायमान कमल वर्णन को प्रस्तुत किया है। षष्ठ अंक में शकुन्तला के चित्र निर्माण के अवसर पर दुष्यन्त द्वारा विचारणीय है।

कार्य सैकतलीन हंस मिथुना स्त्रोतो वहा मालिनी .....।[10] एवं

कृतं न कर्णार्पित बन्धनं सखे शिरीषमागण्डविलम्बिकेसरम्।
न वा शरच्चन्द्र मरीचि कोमलं मृणालसूत्रं रचितं स्तनान्तरे।।[11]

इन पंक्तियों से निर्मल नदी घट पर स्थित हंस बलुका, शिरीषपुष्प, मृणाल तन्तु के संरक्षण एवं सम्वर्धन से शुद्ध पर्यावरण की झांकी प्रस्तुत की गयी है।

महाकवि कालिदास की प्रकृति मात्र मानवीय संवेदनाओं का कारण ही नही! अपितु मानव जाति को सन्देश देते हुए सामाजिक पर्यावरण सम्वर्धन की पोषिका बनी है। चतुर्थ अंक में प्रातः काल के वर्णन में सूर्य एवं चन्द्रमा के क्रमिक उत्थान एवं पतन को प्रस्तुत करते हुए कवि ने हमें उत्कर्ष एवं अपकर्ष के सुख–दुख को धैर्य से सहने की शिक्षा देते हुए आत्मदशा में संयम बरतने की प्रेरणा दी है। जब सूर्य एवं चन्द्र जैसे तेजस्वी प्रकृति तत्व उत्थान एवं पतन से नही बच पाते हैं तो मनुष्य कैसे बच सकता है? किन्तु धैर्य से जैसे सूर्य और चन्द्रमा पुनः उत्कर्ष को प्राप्त करते है, वैसे ही मानव भी धैर्य से जीवन में उत्कर्ष को प्राप्त कर सकता है। ऐसी शिक्षाी दी है।

यात्येकताऽस्तशिखरं पतिरोषधिनामविष्कृतारूणपुरस्सर एकतोऽर्कः।
तेजोद्वयस्य युगपद व्यसनोदयाभ्यां लोको नियभ्यत इवात्म दशान्तरेषु।।[12]

शकुन्तला में मानव की अन्तः प्रकृति एवं बाह्म प्रकृति के बीच एक अपूर्ण सामन्जस्य का चित्रण किया गया है। चन्द्रमा के अस्त हो जाने पर प्रियतम के वियोग से दुखी कुमुदनी की व्यथा वियोग से व्याकुल शकुन्तला की अर्न्तव्यथा का सामंजस्य बड़ा ही मर्म स्पर्शी है–

अन्तर्हिते शशिनि सैव कुमुदवती मे दृष्टिं न नन्दयति संस्मरणीय शोभा।
इष्ट प्रवास जनितान्यबला जनस्य दुखानि नून मति मात्र सुदुःस्हानि।।[13]

नायक दुष्यन्त एवं शकुन्तला के प्रथम एवं अन्तिम सुखद मिलन की घटना प्रकृति के संरक्षण में दो ऋषियो के आश्रम में ही होता है। कवि वस्तुतः प्रकृति के कोमल स्वरूप का चित्रकार है। उसकी दृष्टि में प्रकृति सुन्दर और सहानुभूतिशील मित्र है। व मनुष्य की सहायता एवं सौन्दर्य वृद्धि हेतु हमेशा उद्यत रहती है। शकुन्तला का सौन्दर्य प्रकृति उपादानो के माध्यम से अपनी रमणीयता, सरसता, मुग्धता एवं उपभोग–योग्यता को प्रस्तुत किया है–

अनाघ्रातंपुष्पं किसलय मलूनं कररूहै .....।[14]

इस प्रकार निसन्देह कवि ने अभिज्ञान शाकुन्तल में प्रकृति का अच्छी तरह उपयोग किया है। जैसे विश्व प्रस्द्धि रचना में प्रकृति का वर्णन नाटक के अनिवार्य अंग के रूप में किया है प्रकृति के प्रति घनिष्ट प्रेम पर्यावरणीय चिन्तन को देखा जा सकता है।

सन्दर्भ संकेत


1. अभिज्ञान शाकुन्तलम – 1/1
2. ऋग्वेद – 10–129–03
3. अभिज्ञान शा0– 4/5
4. चतुर्थ अंक – 12
5. अभिज्ञान शा0 – 1/9
6. अभिज्ञान शा0 –4/13
7. अभिज्ञान शा0 प्रथम अंक शकुन्तला कथन
8. तदैव चतुर्थ अंक – शकुन्तला कथन
9. अभिज्ञान शा0 – 1/2
10. अभिज्ञान शा0 – 6/17

11. अभिज्ञान शा0 – 6 / 10
12. अभिज्ञान शा0 – 4 / 12
13. अभिज्ञान शा0 – 4 / 13
14. अभिज्ञान शा0 – 2 / 10